1 नवंबर 2022 का ज्ञानप्रसाद- बालक श्रीराम और मार्गदर्शक सत्ता के दिव्य सूक्ष्म संवाद

चेतना की शिखर यात्रा पार्ट 1, चैप्टर 6

आज के ज्ञानप्रसाद में 15 वर्षीय बालक श्रीराम के अपनी मार्गदर्शक सत्ता के साथ,और ताई जी साथ संवाद इतने रोचक और ज्ञान से भरपूर हैं कि हमें लेख की लम्बाई का ध्यान ही नहीं रहा। हम इतना डूब चुके थे कि पता तब चला जब समापन का समय आ गया। आशा करते हैं कि आप भी इसी रूचि के साथ आज के ज्ञानप्रसाद का अमृतपान करेंगें।

लेख की लम्बाई के कारण ही 24 आहुति संकल्प सूची के लिए इतना ही कहेंगें कि वंदना जी सबसे अधिक अंक करके गोल्ड मैडल विजेता हैं।

तो चलते हैं सीधे आज के लेख की ओर।

****

स्थूल शरीर की सीमा और आवश्यकता

गुरुदेव जैसे कह रहे थे, स्थूल से एक सीमा तक ही काम किया जा सकता है। वे कितने ही महान् और विराट् हों, उनसे **दिव्य** प्रयोजन सिद्ध नहीं होते। दिव्य प्रयोजनों के लिए शरीर को सूक्ष्म स्तर तक ले जाना और सिद्ध करना पड़ता है । कठोर तपश्चर्या का उद्देश्य शरीर को सूक्ष्म स्तर तक ले जाना ही है।

बिना कुछ बताये ही एक प्रश्न उठा कि

अगर स्थूल शरीर की विशेष उपयोगिता नहीं हैं तो इस शरीर का क्या लाभ और इसे क्यों बचाए क्यों रखा जाए? सीधे सूक्ष्म में ही विलय क्यों नहीं कर दिया जाए:

इस प्रश्न का समाधान भी जैसे हिमालय हृदय प्रदेश से ही आया हो। स्थूल शरीर का भी अपना महत्त्व है। यह सत्य है कि स्थूल शरीर की बहुत सी शक्ति तो शरीर की आवश्यकताएँ जैसे रोग, बीमारी, वृद्धावस्था में आने वाली स्थिति इत्यादि जुटाने में ही लग जाती है। शरीर की अधिकांश ऊर्जा इसे संभालने और चलाने में ही खर्च हो जाती है। लेकिन इसका कतई अर्थ नहीं है कि स्थूल शरीर का कोई भी उपयोग है। दिखाई देने वाले काम इस स्थूल शरीर से ही पूरे होते है। लोगों से मिलना-जुलना, अभीष्ट बदलाव लाना और इस संसार में आदान प्रदान को गति देना स्थूल शरीर से ही संभव है। भगवान् को भी जब अपनी लीलाओं का आनंद लेना होता है, तो वे **तन्मात्राओं** से ही अपने स्थूल शरीर की रचना करते हैं।

आइए आगे चलने से पहले तन्मात्राओं के बारे में जान लें।

तन्मात्राओं का अर्थ वह पांच तत्व होते हैं जिनसे हमारा शरीर बना हुआ है। यह पांच तत्व हैं : पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश। विज्ञान के अनुसार यह सब एनर्जी की ही different forms हैं और law of

conservation of energy के अनुसार एक फॉर्म को दूसरी फॉर्म में बदल सकते हैं जैसे कि जल से भाप यां जल से बर्फ। इसलिए सूक्षम को स्थूल यां स्थूल को सूक्ष्म में बदला जा सकता है। पुराणों में उल्लेख है कि प्राचीन काल के योगी तपस्वी ऋषिकल्प आत्माएँ न केवल सूक्ष्म शरीर से आवागमन करने में समर्थ थी, वरन् इच्छानुसार रूप धारण करने और जब चाहे अदृश्य होने और पुनः प्रकट हो जाने की विभूतियों से भी सम्पन्न थीं। ईश्वर पर दृढ़ आस्था एवं साधना से अपने जीवन को बहुत ही पवित्र बनाया जा सकता है। इस साधना के आधार पर unlimited शक्तियाँ विकसित की जा सकती हैं, इच्छानुसार अदृश्य या प्रकट हुआ जा सकता है। परम पूज्य गुरुदेव के बारे में भी वर्णन मिलता है कि वह एक ही समय पर कई जगहों पर देखे गए थे। अफ्रीका यात्रा के दौरान परिजनों ने इस तरह के दृश्य प्रतक्ष्य देखे थे।

श्रीराम के मन में अगला प्रश्न उठा कि जिस क्षेत्र में दादा गुरु का, मार्गदर्शक सत्ता का निवास है, क्या वहाँ जाया जा सकता है? मन में यह प्रश्न उठा ही था कि तत्क्षण यानि उसी क्षण उत्तर आया। तत्क्षण कहना भी गलत होगा क्योंकि प्रश्न उठते ही समाधान भी आ गया । चेतना में समय और सीमा तो रह नहीं गई थी। इसलिए यह भी कहा जा सकता है प्रश्न और उत्तर में

पहले शायद उत्तर ही आया हो। उत्तर मिला कि उचित समय आने पर तुम्हारा परिचय देवात्मा हिमालय से भी कराया जाएगा। इस शरीर और स्वरूप की कठिनाई है क्या है यह भी बताया जायेगा। तुम्हें स्मरण होना चाहिए कि वस्तुत: तुम उसी हिमालयी क्षेत्र के निवासी हो और एक विशिष्ट उद्देश्य की पूर्ति के लिए यहाँ भेजे गये हो। लौकिक कार्य संपन्न करने हैं, इसलिए शरीर पर थोड़ा आवरण डाल दिया गया है।

हिमालय का यह हृदय प्रदेश कैलाश के पास स्थित है। वह कैलाश नहीं, जिसे लोग नक्शे पर चिह्नित करते हैं। सिद्ध जनों का कैलास सर्वथा भिन्न और विलक्षण है। संत-महापुरुष गोमुख के आस-पास निवास करते हैं । केदार क्षेत्र में भी उनके लिए उपयुक्त स्थान है। वहाँ रहकर वे सूक्ष्म लोक में जाने की तैयारी करते हैं। सभी लोग नहीं पहुँच पाते। इक्का-दुक्का ही जा पाते हैं । गीता के इस वचन की तरह कि हजारों मनुष्यों में कोई एक ही उसकी प्राप्ति के लिए यत्न करता है। उन यत्न करने वालों में भी कोई एक ही उपलब्ध हो पाता है। “हिमालय का हृदय” अध्यात्म चेतना के ध्रुव केन्द्र तक पहुँचने के बारे में भी यही समझना चाहिए। दिया गया साधना क्रम ठीक से चलने के बाद तुम्हें वहाँ बुलाया जाएगा। चार-चार दिन की अवधि के लिए वहाँ रहना होगा। हम **“मार्गदर्शक सत्ता”** के रूप में साथ रहेंगे।

सूक्ष्म शरीर धारण करने और उससे कहीं भी गति करने, प्रवेश पाने में कोई कठिनाई नहीं होगी। वैसी सुविधा व्यवस्था बना दी जाएगी। प्रथम प्रयास के बाद तुम्हें अनुभव होगा कि सूक्ष्म रूप कितना समर्थ और सक्षम है। दोनों शरीरों की समर्था और सत्ता का अनुभव करने के बाद तुम्हें आसानी रहेगी। तुम समझ सकोगे कि ऋषिगण अपने संकल्पों को कैसे पूरा करते हैं। सौंपे गये महत्कार्य को संपन्न करने की क्षमता भी तुम उन ऋषिसत्ताओं के सान्निध्य में जाकर जाग्रत् कर सकोगे।'

पुरश्चरण साधना में नियुक्त किए जाने के दिन दो काम और सौंपे गए। आइए देखें कौन से थे यह दो काम।

यह दोनों काम महानुष्ठान के ही भाग थे लेकिन उनका स्वरूप लौकिक ज्यादा था। प्रकाशपुंज से प्रेरणा आ रही थी कि गाँव समाज में जो भी गलत होता दिखाई दे उसका विरोध करना है। उसे नहीं होने देना है और ऐसी तैयारी जुटानी है कि आगे भी नहीं हो सके। इसके लिए लोगों को समझा-सिखा कर तैयार करना है। दिव्य सत्ताएं भारत को विदेशी दासता से मुक्त कराना चाहते हैं, भगवान् की इच्छा से विश्व में भारत को नई भूमिका निभानी है। आने वाली शताब्दियाँ भारत के गौरव को फिर से प्रतिष्ठित करेंगी। इसके लिए भारत का स्वतंत्र होना आवश्यक है। दिव्य

सत्ताओं की प्रेरणा से जनमानस में स्वतंत्रता का उभार आ रहा है। उभार को समर्थ बनाने में तुम भी सहयोगी बनो।जहाँ आवश्यक हो, वहाँ सक्रिय-विरोध किया जाए। साधारण स्थितियों में लोगों को तैयार करने के लिए वाणी और लेखनी का सहारा लिया जाए। भगवान् का संदेश पहुँचाने के लिए और भी उपाय हो सकते हैं, उन सबको अपनाया जाए। श्रीराम के मन में इस प्रेरणा के उभरते समय मन में अन्यथा विचार भी सिर उठाते थे। देश में 30-32 (1926 की जनसँख्या) करोड़ लोग रहते हैं, उन सबको समझाने-सिखाने में कितना समय लगेगा। हमारे अकेले से यह कैसे संभव हो पायेगा। हम कितने भी समर्थ और शक्तिशाली हो जाएँ,करोड़ों लोगों को जगाने का काम हमें अकेले ही करना है और अगर यह भगवान् की ही इच्छा है तो वे लोगों के मन में वैसी प्रेरणा अपनेआप क्यों नही जगाते? जैसे ही विचार प्रवाह आगे बढ़ता,दिव्य प्रेरणा ने उसे रोका।

प्रतिविचार आने लगे, सांस लेने और चलने की तरह भगवान् बंधन-मुक्ति की प्रेरणा भी अपनेआप ही उभार सकते हैं, लेकिन भगवान की योजना मनुष्य को “पुरुषार्थी” बनाने की है। जो धर्मयुद्ध अगले दिनों लड़ा जाना है, उसमें सभी को भागीदार बनना है। जरूरी नहीं कि सभी लोग महायोद्धा हों। रीछ-वानरों और गिलहरी जैसे तुच्छ कहे जाने वाले प्राणियों को भी

हिस्सा लेना है। छोटी-बड़ी, अच्छी-बुरी,पक्ष-विपक्ष सभी की भूमिकाएं निश्चित की जा चुकी हैं। जय-पराजय भी निश्चित हो गई। तुम्हें लोगों तक सिर्फ संदेश पहुँचाना है। यह मत सोचो कि अकेले क्या कर पाओगे, केवल यह सोचो कि तुम क्या कर पाओगे। संगी- साथियों का एक विशाल समुदाय तुम्हारी प्रतीक्षा करता हुआ दिखाई देगा। समय के साथ वह फैलता जाएगा, तुम्हें उनका मार्गदर्शन करना है।

स्वतंत्रता आंदोलन में भागीदारी और लोक शिक्षण की योजना ने जैसे अंतिम रूप ग्रहण कर लिया । विचार और संकल्प विकल्प के साथ ध्यान और सन्निधि का प्रवाह पूरी अवधि में ही बहता रहा। चित्त कभी सविता देवता के ध्यान में डूब जाता, कभी लगता कि उनके तेज में अपना आपा खो गया है, सब कुछ जल कर भस्म हो गया है। कुछ पल बाद अपनी स्वतंत्र चेतना का फिर भान होने लगता लेकिन वह ज्यादा परिपक्व और समर्थ अनुभव होती अनुभव हुई पहले की तुलना में अधिक सुदृढ़। जैसे चेतना का रसायन(chemical) बदल रहा हो, वह कुछ की कुछ होती जा रही हो । इस प्रक्रिया में अपनी मार्गदर्शक सत्ता भी सामने ही उपस्थित अनुभव दिखती रही । **रस-रसायन की यह प्रक्रिया उन्हीं की देख रेख में सम्पन्न होती लगी।** इस तरह की प्रतीतियों में कई बार बदलते दृश्य,

बदलते पुस्तकों के पन्ने बदलने और उलटने-पुलटने जैसी अनुभूति होती रही। कभी यह तो कभी वह दृश्य दिखाई देता।

इस बीच माँ (ताई जी) ने पूजा की कोठरी में कई बार झाँका। सूर्य का सिंधूरी वर्ण बदलते ही श्रीराम अपनी संध्या पूरी कर उठ आते हैं। आज क्या हो गया? संध्या अभी तक संपन्न क्यों नही हई? कहीं पिछले दिनों की भांति लगी समाधि जैसी अवस्था में तो नहीं पहुँच गया? उस समय तो श्रीराम के पिता जीवित थे, सब विधि-विधान जानते थे, समाधि से वापस ले आये थे। अब फिर वैसी ही समाधि लगाई तो कौन वापस लाएगा? माँ को तरह-तरह की चिंताएँ सताए जा रही थीं। इधर नए साधना क्रम का आरंभ करते हुए श्रीराम अपनी मार्गदर्शक सत्ता को सामने ही अनुभव कर रहे थे। उनकी उपस्थिति मन, प्राण और चेतना में रमती जा रही थी।

माँ ने उलाहना दिया

श्रीराम की माता जी से अब सहन नहीं हुआ, कहने लगी :

“आज पूरे दिन कोठरी में बैठे रहोगे क्या ? जगन्माता को विश्राम तो करने दो श्रीराम ।”

गुरुसत्ता के सानिध्य का वह अध्याय पूरा होने के बाद यथार्थ जगत् का पहला अनुभव माँ की यह पुकार थी। कोठरी में कई बार झाँक जाने के बाद उनसे रहा नहीं गया।अपनी समझ से उन्होंने लाड़ले को जगाने की चेष्टा की और श्रीराम ने उठने का उपक्रम किया। माँ अपने दुलारे को उठने की तैयारी करते देख वापस चली गई। वेदी पर रखे दीपक में श्रीराम ने कुछ घी और डाला। अब तक का क्रम था कि पूजा संपन्न होने के बाद दीपक को जलते रहने दिया जाता । घी समाप्त होने के बाद बत्ती पूरी जल जाती और दीपक की लौ हवा में लीन हो जाती। नए सिरे से घी डालने का अर्थ था ज्योति प्रचलित रहेगी। गुरुदेव का बताया हुआ विधान व्यवहार में उतर आया था।

महापुरश्चरण साधना के साथ अखण्ड ज्योति का भी अवतरण उसी दिन वसंत पंचमी पर संपन्न हुआ। तभी से यह अखण्ड दीपक प्रज्वलित है। आगरा, मथुरा होकर यात्रा करता हुआ यह दिव्य दीपक 2026 में 100 वर्ष पूरे कर लेगा। सन् 1971 से यह शांतिकुञ्ज (हरिद्वार) में स्थापित है। जो भी परिजन शांतिकुंज जाते हैं इस दीपक के दर्शन अवश्य करते हैं।

श्रीराम ने सामने विराजमान जगन्माता को प्रणाम किया, उस दिन विसर्जन नहीं किया। संध्या गायत्री के सामान्य जप में आवाहन के बाद

विसर्जन की प्रक्रिया भी सम्पन्न की जाती है। महापुरश्चरण में विजर्सन नहीं किया जाता क्योंकि वह सतत चलते रहने वाला अनुष्ठान है। अगर दैनिक उपासना को एक ही दिन में पूरा हो जाने वाला अध्याय कहा जाए तो महापुरश्चरण एक विराट् ग्रंथ के अखंड पाठ की तरह है जिसमें कितने ही अध्याय होते हैं। उन सबके अवगाहन में लम्बा समय चाहिए। जब तक पूरा नहीं हो जाता, देवशक्तियों की अर्चना-अभ्यर्थना चलती ही रहती है। उनकी उपस्थिति का सम्मान किया जाता है। अपना आचरण, चिंतन और स्तर उनकी गरिमा के अनुरूप रखने की सावधानी रखी जाती है। प्राणपण से उनका निर्वाह किया जाता है। अखण्ड दीपक की स्थापना और निरंतरता उस उपस्थिति के स्थूल प्रमाण के रूप में था। जब श्रीराम पूजा गृह से बाहर आए, तो माँ ने फिर वही उलाहना सा दिया

“गायत्री माता से इतनी देर क्या कहता रहा? उन्हें भी चैन लेने देगा या नही?”

ऐसा कहते कहते ताईजी के चेहरे पर दुलार छलक आया। उसमें कहीं न कहीं यह गर्व और संतोष भी छलक रहा था कि पुत्र अपने पितृ पुरुषों की राह पर चलने की तैयारी कर रहा है। उनके हिसाब से पूजा-पाठ की अगली कड़ी पुरोहिताई और कथा वार्ता ही होनी चाहिए। श्रीराम ने कोई

उत्तर नहीं दिया। चुपचाप कुछ सोचते रहे। माँ ने फिर पूछा, “क्या कहा गायत्री माता ने? तुमने उनसे इतनी लम्बी पूजा करके क्या माँगा?” श्रीराम ने कहा,

”कुछ नहीं माँगा माँ, संध्या करते समय हमारे गुरुदेव प्रकट हो गए थे। उन्होंने आगे का रास्ता बताया कि क्या करना है? उनके बताए रास्ते पर चलना है ?” ताई जी ने पूछा, “क्या रास्ता बताया उन्होंने? कहीं तू मुझे दिया वचन तो तोड़ने नहीं जा रहा। तेरे गुरुदेव ने क्या संन्यासी बनने के लिए कहा है?” ताई जी अधीर हो उठीं। श्रीराम ने उन्हें धीरज बँधाया और कहा,

“नहीं माँ नहीं।गुरुदेव ने आपके पास रह कर ही साधना करने के लिए कहा है। पाँच छ: घंटे रोज प्रतिदिन जप-ध्यान करूँगा। गुरुदेव ने कहा है कि चौबीस वर्ष तक साधना करनी है। गाय के दूध से बनी छाछ और जौ की रोटी का आहार लेना है। पूजा की कोठरी में वह जो दीपक जल रहा है न, उसे अखंड ही रखना है। दीपक में घी हमेशा भरा रहे।”

ताई जी ने कहा,

“चौबीस वर्ष क्या पूरे जीवन साधना करता रह। मुझे क्या फर्क पड़ता है? मैं तो सिर्फ इतना चाहती हूँ कि तुम मेरे पास बने रहो। मुझसे कभी दूर न जाना।” ताई जी ने आश्वस्त होते हुए कहा। फिर कुछ देर सोचती रहीं। अपनेआप में डूबे रह कर ही वे अचानक पुलक उठी, शायद मन में कोई स्फुरणा जगी थी। श्रीराम को पुकारा और उसी पुलक के साथ कहने लगीं, “दीपक अखण्ड रखना है। उसका घी कब तक चलता है, कब नया घी भरना है। यह ध्यान रखने के लिए पूरे समय की निगरानी चाहिए। मैं नहीं कर सकूँगी, यह निगरानी।” श्रीराम ताई जी की बात गौर से सुन रहे थे और उनके चेहरे पर छाई पुलक भी निहार रहे थे। ताई जी कुछ पल रुकी और कहने लगी, “अब तुम शादी लायक भी हो गये हो, ब्याह कर लो। घर में बहू आ जाएगी, तो वह अखण्ड दीपक का भी ध्यान रखेगी। मुझे भी सहारा होगा।” श्रीराम ने कुछ नहीं कहा। उनके मौन को माँ ने स्वीकृति माना । वे कुछ कहते तो अपने अधिकार का उपयोग करने की बात भी मन ही मन तय कर रखी थी लेकिन वह स्थिति नहीं आई। उसी दिन ताईजी ने अपने सगे सम्बन्धियों को उपयुक्त कन्या बताने के लिए कहना शुरू कर दिया। ताई जी क्या कर ही हैं, इस बात से सर्वथा अनजान रहते हुए श्रीराम आगे की व्यवस्थाओं के बारे में सोचने लगे।

माँ से बातचीत के बाद वे बाड़े में गये और एक कपिला गाय को सेवा के लिए चुन लिया। इस चुनाव में कपिला गाय के दूध से बने घी और मठे का ही उपयोग कराने का निश्चय भी था। कपिला गाय का गोबर इकट्ठा किया। उससे पूजा कक्ष को लीपा । माँ ने देखा तो कुछ नहीं कहा, अन्य दिनों में श्रीराम कोई काम अपने हाथ से करते तो रोक लेती थीं। आज चार पाँच घण्टे की पूजा के बाद दादा गुरुदेव से मिलने और चौबीस वर्षों की साधना का व्रत लेने की बात ने कोई हस्तक्षेप करने से रोक दिया। जानती थी कि श्रीराम के हाथ से लेकर पूजा कक्ष को सँभालने की कोशिश करेंगी तो पुत्र राजी नहीं होगा। दो तीन बार रुक कर देखा, किसी तरह के सहयोग की मांग उठने की आस में ठिठकी भी रहीं। लेकिन श्रीराम पूजा कक्ष की व्यवस्था में इस तन्मयता से जुटे रहे जैसे समाधि लग गई हो। कौन आ रहा है, कौन जा रहा है, क्या कर रहा है? उन्हें कोई सुध नहीं थी।

दीपक को अखण्ड रखने का संकल्प करने के बाद बाती की प्रतिष्ठा एक बड़ें दीये में कर दी गई थी। उस दिन पूरे समय ध्यान रखा, अभ्यास के बाद बहुत ज्यादा चिंता नहीं करनी पड़ी। वसंत की उस शाम भी श्रीराम ने और दिनों की अपेक्षा संध्या पूजा में ज्यादा समय लगाया। करीब दो घंटे तक जप में बैठे रहे।

वह सुबह और शाम उनके अपने जीवन में ही नहीं जगत् के इतिहास में भी एक नया पन्ना लिख गई।

इन्ही दिव्य शब्दों के साथ इस अध्याय का समापन करते हैं।

-